eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 02, February 2026

भारतीय जनजातीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा

डॉ. सौरभ सिंह[1]
[1]सहायक प्राध्यापक शिक्षा विभाग, लाला महादेव प्रसाद वर्मा बालिका महाविद्यालय, लखनऊ

Received: 20 Feb 2026 Accepted & Reviewed: 25 Feb 2026, Published: 28 Feb 2026

Abstract

आदि काल से ही प्रकृति और मनुष्य के बीच बहुत गहरा सम्बन्ध रहा है। मनुष्य के विकास में प्रकृति का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। किन्तु वर्तमान समय में प्रकृति के साथ मनुष्यों की अन्तःकिया का दायरा इतना व्यापक हो गया है कि अनेक पर्यावरणीय समस्याऐं बहुत विकराल रूप धारण कर चुकी हैं। पृथ्वी पर मनुष्य के अस्तित्व को बनाये रखने के लिये पर्यावारण संरक्षण की आवश्यकता है। पर्यावरण हास एवं प्रदूषण के कारण पृथ्वी के अस्तित्व पर ही संकट मंडराने लगा है। समस्याओं के समाधान के सभी प्रयास विफल हो रहे हैं तथा वे नित नई समस्याऐं खड़ी कर रहे हैं। ऐसे में प्रश्न उठता है कि हमारे चिंतन की दिशा तो नहीं भटक गई है, लगता तो ऐसा ही है। ऐसी स्थिति में भारतीय चिंतन की आधार भूमि का सहारा लेकर भारत के समाज विज्ञानियों को विश्व मंगल के लिये युगानुरूप नया चिन्तन प्रस्तुत करने के लिये आगे आना होगा। प्राचीन काल में विभिन्न जनजातियों ने स्वयं को पहचान देने के लिये विभिन्न जीव–जन्तुओं के नाम से अपने–अपने टोटम अपना लिये। टोटम पर आदर भाव और श्रद्धा होने के कारण सभी सदस्य उसकी पूजा करते है। प्रकृति का मूल स्वरूप ही हमारा पर्यावरण है जिसमें मानव जाति पालित–पोषित होती आ रही है। सारा संसार इसी पर्यावरण की सुरक्षा और शुद्धता को बनाये रखने के लिये प्रयत्नशील है परन्तु आदिवासी आदिकाल से।

संकेत शब्द– जनजातियां, पर्यावरण, टोटम ।

Introduction

वर्तमान समय में प्रकृति के साथ मनुष्यों के अन्तःक्रिया का दायरा इतना व्यापक हो गया है कि अनेक पर्यावरणीय समस्याऐं बहुत ही विकराल रूप धारण कर चुकी हैं। पर्यावरण के ह्रास के अनेक कारण हैं जैसे बढ़ती हुई गरीबी, तीव्र औद्योगीकरण, शहरी क्षेत्रों का विस्तार, लोगों की शिक्षा में कमी, परंपरागत उर्जा के स्त्रोतों का क्षरण, त्रुटिपूर्ण पर्यावरण नीतियाँ, जटिल न्यायिक प्रक्रिया, न्यायालय एवं कार्यपालिका द्वारा लिये गये निर्णयों के क्रियान्वयन में विलम्ब इत्यादि। विकास के वर्तमान प्रतिमान (मॉडल) ने मनुष्यों के लिए ही नहीं बल्कि सभी प्राणिमात्र के लिए अस्तित्व का संकट खडा कर दिया है। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण एवं मुद्रा प्रदूषण के कारण हमारे चारों तरफ प्रदूषित वातावरण का घेरा गहरा होता जा रहा है। पर्यावरण हास, प्रदूषण स्तर में वृद्धि, वैश्विक तापमान में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन जैसी घटनाओं के कारण समूची पृथ्वी का अस्तित्व ही संकट में पड़ता जा रहा है। नैतिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय मूल्यों में गिरावट तथा पारिवारिक एवं सामुदायिक जीवन के ह्रास ने स्थिति को और अधिक खराब बना दिया है।

अतः पृथ्वी पर मनुष्य के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए पर्यावरण संरक्षण की महती आवश्यकता है। इसी को ध्यान में रखते हुए हमारे देश में संविधान का (बयालिसवाँ संसोधन) अधिनियम, 1976 के द्वारा संविधान संसोधन करके पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रावधानों को राज्य के नीति व निर्देशक तत्व के अनुच्छेद 48क एवं मूल कर्तव्य के अनुच्छेद 51 (क) छ में जोडा गया जो निम्नलिखित हैं–

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 02, February 2026

48 क पर्यावरण का संरक्षण तथा संवर्धन और वन्य जीवों की रक्षा राज्य, देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्धन का और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।

51 क भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह–

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उनका संवर्धन करे तथा प्राणी मात्र के प्रति दया भाव रखे।

इस सार्थक प्रयास के अतिरिक्त सन 1974 में जल प्रदुषण के (निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, सन् 1981 में वायु के प्रदूषण एवं नियंत्रण अधिनियम तथा 1986 में पर्यावरण संरक्षण अधिनियम जैसे केन्द्रीय विधानों को पारित किया गया।

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य अनेक विरोधाभासों एवं विसंगतियों का पिटारा है। जीवन की सुख सुविधा के लिए अनेक उपकरण विकसित हुए हैं। यातायात एवं संचार क्षेत्र में हुई क्रांति ने समूचे विश्व की दूरी को इतना कम कर दिया है कि अब वैश्विक ग्राम (ळसवइंस टपससंहम) की चर्चा होने लगी है। किन्तु इन सबके बीच, मनुष्य– मनुष्य के बीच दूरियाँ बढ रहीं हैं, मन का संताप, अवसाद व तनाव का घेरा गहरा होता जा रहा है, पर्यावरण ह्रास एवं प्रदूषण के कारण पृथ्वी के अस्तित्व पर ही संकट मंडराने लगे हैं।

उपरोक्त कथनों के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि प्राचीन भारत में पर्यावरण संरक्षण के प्रति अनभिज्ञता थी। शायद भारतीय संस्कृति और परंम्परा इस संदर्भ में विश्व की प्रथम संस्कृति और परम्परा होगी। आज हम धार्मिक भावनाओं में विरक्त होकर उन सभी वर्जनाओं की उपेक्षा कर रहे है जिन्हें हमारे ऋषियों ने सीख दी थी और आचरण में अनुपालन हेतु आदेश दिया था। फलतः प्रकृति के विपरीत कार्य हो रहा है और प्रकृति हमें दूषित वातावरण में रहने हेतु विवस कर रही है।

जनजातियों में पर्यावरण संरक्षण :–

समृद्ध सांस्कृतिक–सामाजिक परम्पराऐं व संस्थाऐं भारतीय समाज के उज्ज्वल पक्ष हैं। जब मानव अर्धसभ्य अवस्था में वास करता रहा, जब उसके चारों ओर प्रकृति प्रदत्त पहाड़, नदियाँ, वनस्पति जैसे पेड़, पौधे, आदि की सघन हरियाली और जंगली जीव जन्तुओं आदि की बहुलता थी। मनुष्य के इसी प्रकृति के साथ रहते–रहते अपने परिवार का विस्तार होने पर कुल का गठन और बाद में वंश के बढ़ने पर श्ट्राइब्सश का नामकरण हो गया। ये जनजातियाँ स्वयं को पहचान देने के लिए विभिन्न जंगली जानवरों, पक्षियों यहाँ तक की जीव जन्तुओं के नाम से अपने–अपने श्टोटमश अपना लिये इसी वजह से ट्राइब्स को कभी–कभी श्टोटेमिस्टश भी कहा जाता है।

कुछ महत्वपूर्ण जनजातियों तथा उनके टोटम के नाम निम्नवत हैं–

ट्राइब्स	**टोटम का नाम**
सिंगस	घोड़ा
टज	बकरा
मत्स्य	मीन, मछली या मच्छ

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 02, February 2026

परवा	चिडिया
केली	मुर्गा
इगलार	पुष्प
पावा	साँप
नागा	नाग (काला साँप) कोबरा
विलाला	बिल्ली
सिमहस	षेर

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्रागैतिहासिक युग में आदिम संस्कृति के अनुकूल हर एक कुलवंश के बतौर पहचान भिन्न–भिन्न टोटम विद्यमान थे। सिन्धु कालीन सभ्यता के समय वन्य जीवों को लेकर जो टोटेमिक परम्परा रही थी शायद उसके पीछे वजह वन्य जीवों की समयाकालीन उपयोगिता एवं निर्भरता रही है। टोटम नामधारी भौतिक पदार्थ, पशु या पक्षी, पेड़ या पौधा, असाधारण या अलौकिक या विशिष्ट शक्ति सम्पन्न हैं। इस कारण इसके प्रति गोत्र समूह के सदस्यों में अन्धविश्वास मूलक श्रद्धा, भक्ति व आदर की भावना होती है। टोटम पर आदर भाव और श्रद्धा होने के कारण सभी सदस्य इसकी पूजा करते हैं। टोटम का आदिम समाजो में अधिक महत्व है। इसकी आदिवासी पूजा करते हैं इससे डरते हैं इसके प्रति प्रेम, श्रद्धा और आदर भाव रखते हैं। इसको मारने और खाने पर निषेध को मानते हैं।

प्रकृति की गोद में प्रकृति पुत्र आदिवासियों का क्रमिक विकास हुआ है। प्रकृति की विभिन्न शक्तियों को आदिमानवों ने अपने व्यवहार और विचार से पहचाना, माना और उसको सम्मान दिया। धर्म कर्तव्य की प्रेरणा देता है। हर कर्म इनका आदिवासी धर्म के अनुरूप हो, आदिवासी धर्म में यह चिन्ता रहती है कि किसी का नुकसान न हो। प्रकृति की जो शक्ति जीवन और जगत का पोषण और संरक्षण करती है और जो शक्ति विनाश करती है, इन दोनों की पूजा आदिवासी समुदाय में करने का प्रावधान है ताकि प्रकृति की शक्ति जीवन जगत को आनन्द प्रदान करे और उसे विनाश से बचाये रखे। इसी उद्देश्य से आदिवासी धर्म में प्रकृति की शक्तियों की पूजा की जाती है। आदिवासी समुदाय में धर्मस्थल या पूजा भूमि जंगल का एक छोटा सा भूखण्ड होता है। जहाँ साखू, महुआ, पीपल, आम आदि के वृक्ष होते हैं। वहाँ किसी प्रकार का निर्माण नहीं होता है। वह प्राकृतिक रूप में खुले आसमान के नीचे उन्मुक्त होता है। सभ्य समाज के उपासनालयों की भांति लाखों करोड़ों के निर्माण मंदिर, मस्जिद, गिरिजाघर आदि में धर्म और ईश्वर या देवी–देवता कैद नहीं रहते। ईश्वर या देवी देवताओं के घर तो वन पर्वत, नदी, गगन आदि हैं। तभी मुण्डाओं में सर्वोच्च ईश्वर को सिंडवोगा, वीर वांगा (वन देवता), इकिर वोंगा (जल देवता), वरू वोंगा (पर्वत देवता), हातु वोंगा (ग्राम देवता) आदि कहे जाते हैं और उनकी प्राकृतिक उपस्थिति मानी जाती कें

आदिवासियों में प्रकृति ही ईश्वर का स्वरूप है, प्राकृतिक स्वरूप ही ईश्वर का घर है। आदिवासी संस्कृति में सभी जीवों, प्रकृति एवं मानव जाति में समानता का भाव बना रहता है। आदिवासी धर्म एवं संस्कृति पर्यावरण की सुरक्षा पर आधारित है। क्योंकि ये आदिम युग से जानते आ रहे हैं कि पर्यावरण के संरक्षण, संवर्धन एवं शुद्धता के बिना मानव जीवन सुरक्षित नहीं रह सकता। तभी तो आदिम जनजातियाँ बड़े–बड़े

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 02, February 2026

विशाल साखू वनों में रहते हैं पर इन कीमती लकड़ियों के घर नहीं, पत्तों टहनियों से घर बनाते हैं। शिकार भी करते हैं तो गाभिन, बच्चे पशुओं को छोड़कर।

पर्यावरण की सुरक्षा और शुद्धता को बनाए रखने के लिए ही तो आदिवासी सरहुल, करमा, सोहराई, भेलवा फारी आदि पर्व मनाते हैं। सरहुल इनका वसंतोत्सव है जिससे कृषि कर्म आरम्भ होता है। करमा का पर्व प्रथम कृषि फसल प्राप्त करने का पर्व है। सोहरई इनके कृषि कर्म के सहयोगी पशु गाय, बैल, भैसों आदि को सम्मान देने का त्योहार है।

प्रकृति और संस्कृति का सन्तुलन बना रहे। प्रकृति का विनास करने से आदिवासी सदा दूर रहता है, कोई अपने पालक को कैसे नष्ट कर सकता है। प्रकृति उसकी पालक और संरक्षक रही है। जनजातियों में टोटमवाद का पर्याप्त महत्व रहा है। यह सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने में सहायता प्रदान करता है। टोटम के आधार पर सामुदायिक भावना का विकास होता है। जनजातियों में अनेक टोटम संम्बन्धी व्यवहारों का चलन पाया जाता है जैसे– टोटम संम्बन्धी जीव को नहीं मारना, यदि टोटम वृक्ष है तो उसके फल न खाना तथा उसे हानि न पहुँचाना, टोटम प्राणी की मृत्यु पर शोक प्रकट करना आदि।

प्राचीन भारतीय सभ्यता एवं अध्यात्म का विकास वनों में स्थित ऋषि आश्रमों के माध्यम से ही हुआ है जो भारतीय शिक्षा–दीक्षा के साथ ही राज्य के नीति नियंत्रक केन्द्र भी थे। वृक्ष, पर्वत, झरने, पशु, पक्षियों, नदियों एवं अन्य प्राकृतिक उत्पादों को भारतीय परिवेश में ईश्वर का रूप माना गया है। ये मानव और कल–कारखानों के द्वारा उत्सर्जित विषाक्त वायु को प्राण वायु (आक्सीजन) में बदल कर मनुष्य ही नहीं बल्कि सृष्टि के समस्त जीवों को जीवन प्रदान करते हैं। भारतीय व्यवस्था में वृक्षों को रूद्र के रूप में देखा गया है एवं शास्त्रों में वृक्षों के पूजन का विधान निर्धारित है। प्राचीन काल में पर्यावरण सुरक्षा एवं संवर्धन हेतु व्यापक प्रबन्ध थे। उन पेडों और पौधों को जो समाज के लिए विशिष्ट लाभप्रद थे तथा मानव कल्याणार्थ सर्वाधिक उपयोगी थे उनको पूजनीय पौधों की श्रेणी में रखा गया और धार्मिक आस्था से जोड़ दिया गया जैसे– तुलसी, पीपल, नीम, बरगद, आम इत्यादि। वन्य जीव प्रजातियों और पर्वतों की भी अत्यधिक महत्व दिया गया है और पर्यावरण प्रबन्धन हेतु कुछ विशेष को स्वयं भगवान का रूप या वाहन बतलाया गया है। आदिवासी अतीत का अवबोध लिये होते है जो उनकी विश्वोत्पत्ति, ब्रह्माण्ड विज्ञान का हिस्सा होता है। जो जीवन की उत्पत्ति से लेकर मानव के उद्‌भव और विकास को अपने में समेटता है। वाह्य तत्वों से अपना सामना या मुठभेड़ उनके लिए पीड़ादायक व कटु रही है। आदिवासी कविताओं, लोकगीतों में यह अवबोध स्पष्ट रूप से मुखरित हुआ है।

लघु–लघु संस्कृतियों और संसाधनों और उन्हें पल्लवित पुष्पित करने वाले पर्यावरण पर मंडराता जबर्दस्त खतरा गहराता रहा है अतएव आदिवासी विश्व में जमीन, जंगल, पर्यावरण संस्कृति मामलों में बढ़ती समझ एक स्वागत योग्य कदम कहा जा सकता है। आजकल के पर्यावरणीय आन्दोलन ने आदिवासी संस्कृति की तलाश की है। टोटम में दिलचस्पी को पुनर्जीवित किया जा रहा है क्योंकि यह मनुष्य पौधों पशुओं के बीच सम्पर्क सेतु प्रस्तुत करता है। दरअसल यह विश्वासों की उस पद्धति में रूचि का पुनरूज्जीवन है जिसने आदिवासी परम्पराओं, गीतों, नृत्यों और अनेक प्रकार के रिश्तों में अभिव्यक्ति पाई है। आदिवासियों और उनके शमनों को पर्यावरण व संसाधनों की एक अनन्य श्रृंखला के संरक्षक की मान्यता दी गई है।

निष्कर्ष:– इस प्रकार उपरोक्त वर्णनों से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय जनजातीय समाज का पर्यावरण के संरक्षण में जाने–अनजाने में ही सही एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भारतीय जनजातीय संस्कृति में

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 02, February 2026

अनेक प्रकार की परम्पराएं थीं जिनके माध्यम से वे अपने प्राकृतिक पर्यावरण को संरक्षित करने एवं उसके संवर्धन में अपना योगदान देती थीं। आदिवासियों में टोटम का प्रचलन था। टोटम के माध्यम से जनजातियों के विभिन्न समूहों को आपस में अलग पहचान मिलती थी। टोटम एक प्रकार का संकेत होता था जो उस जनजातीय समूह की पहचान होती थी। टोटम कोई पेड़–पौधा, जीव–जन्तु इत्यादि हो सकता है। जनजातीय लोग अपने टोटम की पूजा अर्चना करते थे। टोटम उस जनजाति द्वारा संरक्षित किये जाते थे। उसका शिकार नहीं करते थे। अगर किसी जनजाति का टोटम कोई वृक्ष है तो जनजाति के लोग उसकी पूजा करते थे उसे काटा नहीं जाता था। और कोई जन्तु है तो उसका शिकार नहीं किया जाता था। इस प्रकार भारतीय जनजातियों में वनों का संरक्षण, जीवों का संरक्षण तथा पर्यावरण का संरक्षण करने में टोटमवाद का प्रमुख स्थान है। इसके परिणाम स्वरूप हमारा प्राकृतिक वातावरण शुद्ध एवं संतुलित रहता था। वर्तमान समय में औद्योगिक विकास एवं आधुनिकता की दौड़ के कारण हमारे पर्यावरण में अनेक प्रकार के प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो गई है जिसके कारण भारतीय जनजातियों के जीवन पर अस्तित्व का खतरा तथा सामान्य लोगों के जीवन पर अनेक प्रकार के नकारात्मक प्रभाव दिखाई पडते हैं। दिन ब दिन पूरे विश्व के सामने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या एक विकराल रूप लेती जा रही है।

पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या का हल निकालना एवं पर्यावरण को संरक्षित करना पूरे विश्व के सामने एक चुनौती है। विश्व द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लिए अनेक प्रकार के प्रावधान किये गये हैं लेकिन संतोषजनक नहीं हैं, अभी और प्रयास की आवश्यकता है। भारत में भी पर्यावरण संरक्षण के लिये सरकार द्वारा अनेक प्रकार के प्रावधान किये गये हैं जिनमे अनेक प्रकार के जीव–जन्तुओं के संरक्षण के लिए स्पेशल प्रोजेक्ट की व्यवस्था की गई एवं सरकार द्वारा अनेक कानून बनाए गये हैं। कानून का पालन न करने पर सजा का भी प्रावधान किया गया है। पर्यावरण संरक्षण के लिये उठाये गये कदमों के द्वारा सरकार कुछ हद तक इसमें कामयाब भी रही है लेकिन इस दिशा में और प्रयास की आवश्यकता है जिससे की और संतोषजनक परिणाम प्राप्त हो सकें। पर्यावरण के संरक्षण के लिये आदिवासी विश्व में जमीन, जंगल पर्यावरण संरक्षण के प्रति बढ़ती समझ एक स्वागत योग्य कदम कहा जा सकता है। टोटम में दिलचस्पी को पुनर्जीवित करके मनुष्य पौधों पशुओं के बीच सम्पर्क सेतु का निर्माण किया जा सकता है जो पर्यावरण संरक्षण की दिशा में मील का पत्थर साबित हो सकता है।

अतः अनेक प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं का हल निकालने के लिए हमें अपने आदिम परम्पराओं, संस्कृतियों की ओर देखना चाहिए एवं एक उचित समाधान निकालने का प्रयास किया जाना चाहिए जो कि आज के परिदृश्य में भी प्रासंगिक एवं व्यवहारिक हो। अतः आज भी हमें अपने पर्यावरण के संरक्षण के लिये अपनी परम्पराओं की अच्छी चीजों का सहारा लेना चाहिए जो कि समस्या का समाधान करने में समर्थ हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

- अमीन, खन्नाप्रसाद (2017). आदिवासी साहित्य. दिल्ली: श्री नटराज प्रकाशन
- भालेराव, साहेबराव पं., एवं धारवडकर, दीपक सु. (2015). भारतीय जनजातियां: संरचना एवं विकास. जयपुर: इशिका पब्लिशिंग हाउस.
- हसनैन, नदीम (2010). जनजातीय भारत. नई दिल्ली: जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.
- महाजन, संजीव (2012). भारत मे जनजातीय समाज. नई दिल्लीः अर्जुन पब्लिशिंग हाउस ..

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 02, February 2026

- मीना, डॉ. जनक सिंह, एवं मीना, डॉ. कुलदीप सिंह (2017). भारत के आदिवासी चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ . नई दिल्लीरू वाणी प्रकाशन.
- मीना, मंगल चंद (2019). भारत का जनजातीय इतिहास. जयपुरः रावत पब्लिकेशन्स.
- मिश्रा, महेन्द्र कुमार (2008). भारतीय समाज मे जनजातीय अवधारणाएं जयपुरः श्रुति पब्लिकेशन्स.
- त्रिपाठी, प्रो. मधुसूदन, एवं त्रिपाठी, पतंजलि (2016). भारत मे अनुसूचित जाति–जनजातिः सामाजिक एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य गुड़गांव महेन्द्र बुक कम्पनी